अध्याय-५

चाँद पाटील की बारात के साथ श्री साई बाबा का पुनः आगमन, अभिनंदन तथा 'श्री साई' शब्द से सम्बोधन, अन्य संतों से भेंट, वेशभूषा व नित्य कार्यक्रम, पादुकाओं की कथा, मोहिद्दीन के साथ कुश्ती, मोहिद्दीन का जीवन परिवर्तन, जल का तेल में रूपान्तर, मिथ्या गुरु जौहरअली।

जैसा गत अध्याय में कहा गया है, मैं अब श्री साई बाबा के शिरडी से अन्तर्धान होने के पश्चात् उनका शिरडी में पुनः किस प्रकार आगमन हुआ, इसका वर्णन करूँगा।

चाँद पाटील की बारात के साथ पुनः आगमन

जिला औरंगाबाद (निजाम स्टेट) के धूपगाँव में चाँद पाटील नामक एक धनवान् मुस्लिम रहते थे। जब वे औरंगाबाद को जा रहे थे तो मार्ग में उनकी घोड़ी खो गई। दो मास तक उन्होंने उसकी खोज में घोर परिश्रम किया, परन्तु उसका कहीं पता न चल सका। अन्त में वे निराश होकर उसकी जीन को पीठ पर लटकाये औरंगाबाद को लौट रहे थे। तब लगभग १४ मील चलने के पश्चात् उन्होंने एक आम्रवृक्ष के नीचे एक फकीर को चिलम तैयार करते देखा, जिसके सिर पर एक टोपी, तन पर कफनी और पास में एक सटका था। फकीर के बुलाने पर चाँद पाटील उनके पास पहुँचे। जीन देखते ही फकीर ने पूछा, ''यह जीन कैसी?'' चाँद पाटील ने निराशा के स्वर में कहा ''क्या कहूँ? मेरी एक घोड़ी थी, वह खो गई है और यह उसी की जीन है।''

फकीर बोले - ''थोड़ा नाले की ओर भी तो ढूँढ़ो।'' चाँद पाटील नाले के समीप गए तो अपनी घोड़ी को वहाँ चरते देखकर उन्हें महान् आश्चर्य हुआ। उन्होंने सोचा कि फकीर कोई सामान्य व्यक्ति नहीं,

वरन् कोई उच्च कोटि का मानव दिखलाई पड़ता है। घोड़ी को साथ लेकर जब वे फकीर के पास लौटकर आए, तब तक चिलम भरकर तैयार हो चुकी थी। केवल दो वस्तुओं की और आवश्यकता रह गई थी। एक तो, चिलम सुलगाने के लिये अग्नि और दूसरा साफी को गीला करने के लिये जल। फकीर ने अपना चिमटा भूमि में घुसेड़ कर ऊपर खींचा तो उसके साथ ही एक प्रज्ज्वलित अंगारा बाहर निकला और वह अंगारा चिलम पर रखा गया। फिर फकीर ने सटके से ज्योंही बलपूर्वक जमीन पर प्रहार किया, त्योंही वहाँ से पानी निकलने लगा और उसने साफी को भिगोकर चिलम को लपेट लिया। इस प्रकार सब प्रबन्ध कर फकीर ने चिलम पी और तत्पश्चात् चाँद पाटील को भी दी। यह सब चमत्कार देखकर चाँद पाटील को बड़ा विस्मय हुआ। चाँद पाटील ने फकीर से अपने घर चलने का आग्रह किया। दूसरे दिन चाँद पाटील के साथ फकीर उनके घर चला गया और वहाँ कुछ समय तक रहा। पाटील धूपगाँव का अधिकारी था। उसके घर पर अपने साले के लड़के का विवाह होने वाला था और बारात शिरडी को जाने वाली थी। इसलिये चाँद पाटील शिरडी को प्रस्थान करने का पूर्ण प्रबन्ध करने लगा। फकीर भी बारात के साथ ही गया। विवाह निर्विघ्न समाप्त हो गया और बारात कुशलतापूर्वक धूपगाँव को लौट आई। परन्तु वह फकीर शिरडी में ही रुक गया और जीवनपर्यन्त वहीं रहा।

फकीर को 'साई' नाम कैसे प्राप्त हुआ?

जब बारात शिरडी में पहुँची तो खंडोबा के मंदिर के समीप म्हालसापति के खेत में एक वृक्ष के नीचे ठहराई गई। खंडोबा के मंदिर के सामने ही सब बैलगाड़ियाँ खोल दी गईं और बारात के सब लोग एक-एक करके नीचे उतरने लगे। तरुण फकीर को उतरते देख म्हालसापति ने ''आओ साई'' कहकर उनका अभिनन्दन किया तथा अन्य उपस्थित लोगों ने भी 'साई' शब्द से ही सम्बोधन कर उनका आदर किया। इसके पश्चात् वे 'साई' नाम से ही प्रसिद्ध हो गए।

अन्य संतों से सम्पर्क

शिरडी आने पर श्री साईबाबा मस्जिद में निवास करने लगे। बाबा

के शिरडी में आने के पूर्व देवीदास नाम के एक सन्त अनेक वर्षों से वहाँ रहते थे। बाबा को वे बहुत प्रिय थे। वे उनके साथ कभी हनुमान मन्दिर में और कभी चावड़ी में रहते थे। कुछ समय के पश्चात् जानकीदास नाम के एक संत का भी शिरडी में आगमन हुआ। अब बाबा जानकीदास से वार्त्तालाप करने में अपना बहुत-सा समय व्यतीत करने लगे। जानकीदास भी कभी-कभी बाबा के स्थान पर चले आया करते थे; और पुणताम्बे के श्री गंगागीर नामक एक पारिवारिक वैश्य संत भी बहुधा बाबा के पास आया-जाया करते थे। जब प्रथम बार उन्होंने श्री साईबाबा को बगीचा सींचने के लिये पानी ढोते देखा तो उन्हें बड़ा अचम्भा हुआ। वे स्पष्ट शब्दों में कहने लगे कि **''शिरडी परम भाग्यशालिनी है, जहाँ एक अमूल्य हीरा है।** जिन्हें तुम इस प्रकार परिश्रम करते हुए देख रहे हो, वे कोई सामान्य पुरुष नहीं हैं। अपितु यह भूमि बहुत भाग्यशालिनी तथा महान् पुण्यभूमि है, इसी कारण इसे यह रत्न प्राप्त हुआ है।'' इसी प्रकार श्री अक्कलकोट महाराज के एक प्रसिद्ध शिष्य संत आनन्द नाथ, (येवलामठ) जो कुछ शिरडी निवासियों के साथ शिरडी पधारे, उन्होंने भी स्पष्ट कहा, कि **''यद्यपि बाह्यदृष्टि से ये साधारण व्यक्ति जैसे प्रतीत होते हैं, परन्तु ये सचमुच असाधारण व्यक्ति हैं। इसका तुम लोगों को भविष्य में अनुभव होगा।''** ऐसा कहकर वे येवला को लौट गए। यह उस समय की बात है, जब शिरडी बहुत ही साधारण-सा गाँव था और साईबाबा छोटी उम्र के थे।

बाबा का रहन-सहन व नित्य कार्यक्रम

तरुण अवस्था में श्री बाबा ने अपने केश कभी भी नहीं कटाये और वे सदैव एक पहलवान की तरह रहते थे। जब वे राहाता जाते (जो कि शिरडी से ३ मील दूर है) तो वहाँ से वे गेंदा, जाई और जूही के पौधे मोल ले आया करते थे। वे उन्हें स्वच्छ करके उत्तम भूमि देखकर लगा देते और स्वयं सींचते थे। वामन तात्या नाम के एक भक्त इन्हें नित्य प्रति दो मिट्टी के घड़े दिया करते थे। इन घड़ों द्वारा बाबा स्वयं ही पौधों में पानी डाला करते थे। वे स्वयं कुएँ से

पानी खींचते और संध्या समय घड़ों को नीम वृक्ष के नीचे रख देते थे। जैसे ही घड़े वहाँ रखते, वैसे ही वे फूट जाया करते थे, क्योंकि वे बिना तपाये और कच्ची मिट्टी के बने रहते थे। दूसरे दिन तात्या उन्हें फिर दो नये घड़े दे दिया करते थे। यह क्रम तीन वर्षों तक चला और श्री साई बाबा के कठोर परिश्रम तथा प्रयत्न से वहाँ फूलों की एक सुन्दर फुलवारी बन गई। आजकल इसी स्थान पर बाबा के समाधि-मंदिर की भव्य इमारत शोभायमान है, जहाँ सहस्त्रों भक्त आते-जाते रहते हैं।

नीम वृक्ष के नीचे पादुकाओं की कथा

श्री अक्कलकोट महाराज के एक भक्त, जिनका नाम भाई कृष्णजी अलीबागकर था, उनके चित्र का नित्य-प्रति पूजन किया करते थे। एक समय उन्होंने अक्कलकोट (शोलापुर जिला) जाकर महाराज की पादुकाओं का दर्शन एवं पूजन करने का निश्चय किया। परन्तु प्रस्थान करने के पूर्व अक्कलकोट महाराज ने स्वप्न में दर्शन देकर उनसे कहा कि आजकल शिरडी ही मेरा विश्राम-स्थल है और तुम वहीं जाकर मेरा पूजन करो। इसलिये भाई ने अपने कार्यक्रम में परिवर्त्तन कर शिरडी आकर श्री साईबाबा की पूजा की। वे आनन्दपूर्वक शिरडी में छः मास रहे और इस स्वप्न की स्मृति-स्वरूप उन्होंने पादुकाएँ बनवाईं। शक सं. १८३४ में श्रावण में शुभ दिन देखकर नीम वृक्ष के नीचे वे पादुकाएँ स्थापित कर दीं। दादा केलकर तथा उपासनी महाराज ने यथाविधि स्थापना-उत्सव सम्पन्न किया। एक दीक्षित ब्राह्मण पूजन के लिये नियुक्त कर दिया गया और प्रबन्ध का कार्य एक भक्त सगुण मेरु नायक को सौंपा गया।

कथा का पूर्ण विवरण

ठाणे के सेवानिवृत मामलतदार श्री बी.व्ही. देव, जो श्री साईबाबा के एक परम भक्त थे, उन्होंने सगुण मेरु नायक और गोविंद कमलाकर दीक्षित से इस विषय में पूछताछ की। पादुकाओं का पूर्ण विवरण श्री साई लीला भाग ११, संख्या १, पृष्ठ २५ में प्रकाशित हुआ है, जो निम्नलिखित है :- शक १८३४ (सन् १९१२) में बम्बई के एक भक्त

डॉ. रामराव कोठारे बाबा के दर्शनार्थ शिरडी आए। उनका कम्पाउंडर और उनके एक मित्र भाई कृष्णजी अलीबागकर भी उनके साथ में थे। कम्पाउंडर और भाई की सगुण मेरु नायक तथा जी.के. दीक्षित से घनिष्ठ दोस्ती हो गई। अन्य विषयों पर चर्चा करते समय इन लोगों को विचार आया कि श्री साईबाबा के शिरडी में प्रथम आगमन तथा पवित्र नीम वृक्ष के नीचे निवास करने की ऐतिहासिक स्मृति के उपलक्ष्य में क्यों न पादुकाएँ स्थापित की जाएँ? जब पादुकाओं के निर्माण पर विचार विमर्श होने लगा। तब भाई के मित्र कम्पाउंडर ने कहा कि यदि यह बात मेरे स्वामी कोठारे को विदित हो जाए तो वे इस कार्य के निमित्त अति सुन्दर पादुकायें बनवा देंगे। यह प्रस्ताव सबको मान्य हुआ और डॉ. कोठारे को इसकी सूचना दी गई। उन्होंने शिरडी आकर पादुकाओं की रूपरेखा बनाई तथा इस विषय में उपासनी महाराज से भी खंडोबा के मंदिर में भेंट की। उपासनी महाराज ने उसमें बहुत से सुधार किये और कमल फूलादि खींच दिये तथा नीचे लिखा श्लोक भी रचा, जो नीम वृक्ष के महात्म्य व बाबा की योगशक्ति का द्योतक था, जो इस प्रकार है :-

सदा निंबवृक्षस्य मूलाधिवासात्
सुधास्त्राविणं तिक्तमप्यप्रियं तम्।
तरुं कल्पवृक्षाधिकं साधयन्तं
नमामीश्वरं सद्गुरुं साईनाथम्॥

अर्थात्-मैं भगवान साईनाथ को नमन करता हूँ, जिनका सान्निध्य पाकर नीम वृक्ष कटु तथा अप्रिय होते हुये भी अमृत वर्षा करता था। (इस वृक्ष का रस अमृत कहलाता है) इसमें अनेक व्याधियों से मुक्ति देने के गुण होने के कारण इसे 'कल्पवृक्ष' से भी श्रेष्ठ कहा गया है।

उपासनी महाराज का विचार सर्वमान्य हुआ और कार्य रूप में भी परिणत हुआ। पादुकायें बम्बई में तैयार कराई गईं और कम्पाउंडर के हाथों शिरडी भेज दी गईं। बाबा की आज्ञानुसार इसकी स्थापना श्रावण की पूर्णिमा के दिन की गई। इस दिन प्रात:काल ११ बजे जी.के. दीक्षित उन्हें अपने मस्तक पर धारण कर खंडोबा के मंदिर से समारोह

और धूमधाम के साथ द्वारकामाई में लाये। बाबा ने पादुकाएँ स्पर्श कर कहा कि, ''ये भगवान के श्री चरण हैं। इनकी नीम वृक्ष के नीचे स्थापना कर दो।'' इसके एक दिन पूर्व ही बम्बई के एक पारसी भक्त पास्ता शेट ने २५ रुपयों का मनीआर्डर भेजा। बाबा ने ये रुपये पादुकाओं की स्थापना के निमित्त दे दिये। स्थापना में कुल १०० रुपये व्यय हुये, जिनमें ७५ रुपये चन्दे द्वारा एकत्रित हुए। प्रथम पाँच वर्षों तक डॉ. कोठारे दीपक के निमित्त २ रुपये मासिक भेजते रहे। उन्होंने पादुकाओं के चारों ओर लगाने के लिये लोहे की छड़ें भी भेजीं। स्टेशन से छड़ें ढोने और छप्पर बनाने का खर्च (७ रुपये ८ आने) सगुण मेरु नायक ने दिये। आजकल जरबाड़ी (नाना पुजारी) पूजन करते हैं और सगुण मेरु नायक नैवेद्य अर्पण करते तथा संध्या को दीपक जलाते हैं। भाई कृष्णजी पहले अक्कलकोट महाराज के शिष्य थे। अक्कलकोट जाते हुए, वे शक १८३४ में पादुका-स्थापन के शुभ अवसर पर शिरडी आए और दर्शन करने के पश्चात् जब उन्होंने बाबा से अक्कलकोट प्रस्थान करने की आज्ञा माँगी, तब बाबा कहने लगे, ''अरे! अक्कलकोट में क्या है? तुम वहाँ व्यर्थ क्यों जाते हो? वहाँ के महाराज तो यहीं (मैं स्वयं) हैं।'' यह सुनकर भाई ने अक्कलकोट जाने का विचार त्याग दिया। पादुकाएँ स्थापित होने के पश्चात् वे बहुधा शिरडी आया करते थे। श्री बी.व्ही. देव ने अंत में ऐसा लिखा है कि इन सब बातों का विवरण हेमाडपंत को विदित नहीं था। अन्यथा वे श्री साई सच्चरित्र में लिखना कभी नहीं भूलते।

मोहिद्दीन तम्बोली के साथ कुश्ती और जीवन परिवर्तन

शिरडी में एक पहलवान था, जिसका नाम मोहिद्दीन तम्बोली था। बाबा का उससे किसी विषय पर मतभेद हो गया। फलस्वरूप दोनों में कुश्ती हुई और बाबा हार गए। इसके पश्चात् बाबा ने अपनी पोशाक और रहन-सहन में परिवर्त्तन कर दिया। वे कफनी पहनते, लंगोट बाँधते और एक कपड़े के टुकड़े से सिर ढँकते थे। वे आसन तथा शयन के लिये एक टाट का टुकड़ा काम में लाते थे। इस प्रकार फटे-पुराने चिथड़े पहन कर वे बहुत सन्तुष्ट प्रतीत होते थे। वे सदैव यही कहा करते थे कि ''गरीबी अव्वल बादशाही, अमीरी से लाख सवाई,

गरीबों का अल्ला भाई।'' गंगागीर को भी कुश्ती से बड़ा अनुराग था। एक समय जब वह कुश्ती लड़ रहा था, तब इसी प्रकार उसको भी त्याग की भावना जागृत हो गई। इसी उपयुक्त अवसर पर उसे देव वाणी सुनाई दी **''भगवन् के साथ खेल में अपना शरीर लगा देना चाहिए।''** इस कारण वह संसार छोड़ आत्म-अनुभूति की ओर झुक गया। पुणताम्बे के समीप एक मठ स्थापित कर वह अपने शिष्यों सहित वहाँ रहने लगा। श्री साईबाबा लोगों से न मिलते और न ही वार्त्तालाप करते थे। जब कोई उनसे कुछ प्रश्न करता तो वे केवल उतना ही उत्तर देते थे। दिन के समय वे नीम वृक्ष के नीचे विराजमान रहते थे। कभी-कभी वे गाँव की मेड़ पर नाले के किनारे एक बबूल-वृक्ष की छाया में भी बैठे रहते थे और संध्या को अपनी इच्छानुसार कहीं भी वायु-सेवन को निकल जाया करते थे। नीमगाँव में वे बहुधा बालासाहेब डेंगले के घर जाया करते थे। बाबा श्री बालासाहेब को बहुत प्यार करते थे। उनके छोटे भाई, जिसका नाम नानासाहेब था, के द्वितीय विवाह करने पर भी उनको कोई संतान न थी। बालासाहेब ने नानासाहेब को श्री साई बाबा के दर्शनार्थ शिरडी भेजा। कुछ समय पश्चात् उनकी श्री कृपा से नानासाहेब के यहाँ एक पुत्ररत्न हुआ। इसी समय से बाबा के दर्शनार्थ लोगों का अधिक संख्या में आना प्रारंभ हो गया तथा उनकी कीर्त्ति भी दूर दूर तक फैलने लगी। अहमदनगर में भी उनकी अधिक प्रसिद्धि हो गई। तभी से नानासाहेब चांदोरकर, केशव चिदम्बर तथा अन्य कई भक्तों का शिरडी में आगमन होने लगा। बाबा दिनभर अपने भक्तों से घिरे रहते और रात्रि में जीर्ण-शीर्ण मस्जिद में शयन करते थे। इस समय बाबा के पास कुल सामग्री - चिलम, तम्बाकू, एक टमरेल, एक लम्बी कफनी, सिर के चारों ओर लपेटने का कपड़ा और एक सटका था, जिसे वे सदा अपने पास रखते थे। सिर पर सफेद कपड़े का एक टुकड़ा वे सदा इस प्रकार बाँधते थे कि उसका एक छोर बायें कान पर से पीठ पर गिरता हुआ ऐसा प्रतीत होता था, मानो बालों का जूड़ा हो। हफ्तों तक वे इन्हें स्वच्छ नहीं करते थे। पैर में कोई जूता या चप्पल भी नहीं पहनते थे। केवल एक टाट का टुकड़ा ही अधिकांश दिन में उनके आसन का काम देता था। वे

एक कौपीन धारण करते और सर्दी से बचने के लिये दक्षिण मुख हो धूनी से तपते थे। वे धूनी में लकड़ी के टुकड़े डाला करते थे तथा अपना अहं, इच्छाओं और समस्त विषय आसक्तियों की उसमें आहुति दिया करते थे। वे ''अल्लाह मालिक'' का सदा उच्चारण किया करते थे। जिस मस्जिद में वे पधारे थे, उसमें केवल दो कमरों के बराबर लम्बी जगह थी और यहीं सब भक्त उनके दर्शन करते थे। १९१२ के पश्चात् कुछ परिवर्त्तन हुआ। पुरानी मस्जिद का जीर्णोद्धार हो गया और उसमें एक फर्श भी बनाया गया। मस्जिद में निवास करने के पूर्व बाबा दीर्घकाल तक तकिया में रहे। वे पैरों में घुँघरु बाँधकर प्रेमविह्वल होकर सुन्दर नृत्य व गायन भी करते थे।

जल का तेल में परिवर्त्तन

बाबा को प्रकाश से बड़ा अनुराग था। वे संध्या समय दुकानदारों से भिक्षा में तेल माँग लेते थे तथा दीपमालाओं से मस्जिद को सजाकर, रात्रिभर दीपक जलाया करते थे। यह क्रम कुछ दिनों तक ठीक इसी प्रकार चलता रहा। अब बनिये तंग आ गए और उन्होंने संगठित होकर निश्चय किया कि आज कोई उन्हें तेल की भिक्षा न दे। नित्य नियमानुसार जब बाबा तेल माँगने पहुँचे तो प्रत्येक स्थान पर उनका नकारात्मक उत्तर से स्वागत हुआ। किसी से कुछ कहे बिना बाबा मस्जिद को लौट आए और सूखी बत्तियाँ दीयों में डाल दीं। बनिये तो बड़े उत्सुक होकर उनपर दृष्टि जमाये हुये थे। बाबा ने टमरेल उठाया, जिसमें बिल्कुल थोड़ा सा तेल था। उन्होंने उसमें पानी मिलाया और वह तेल-मिश्रित जल वे पी गए। उन्होंने उसे पुनः टीनपाट में उगल दिया और वही तेलिया पानी दीयों में डालकर उन्हें जला दिया। उत्सुक बनियों ने जब दीपकों को पूर्ववत् रात्रि भर जलते देखा, तब उन्हें अपने किए पर बड़ा दुःख हुआ और उन्होंने बाबा से क्षमा-याचना की। बाबा ने उन्हें क्षमा कर भविष्य में सत्य व्यवहार रखने के लिये सावधान किया।

मिथ्या गुरु जौहर अली

उपर्युक्त वर्णित कुश्ती के पाँच वर्ष पश्चात् जौहर अली नाम के एक

फकीर अपने शिष्यों के साथ राहाता आए। वे वीरभद्र मंदिर के समीप एक मकान में रहने लगे। फकीर विद्वान् था। कुरान की आयतें उसे कंठस्थ थी। उसका कंठ मधुर था। गाँव के बहुत से धार्मिक और श्रद्धालु जन उसके पास आने लगे और उसका यथायोग्य आदर होने लगा। लोगों से आर्थिक सहायता प्राप्त कर, उसने वीरभद्र मंदिर के पास एक ईदगाह बनाने का निश्चय किया। इस विषय को लेकर कुछ झगड़ा हो गया, जिसके फलस्वरूप जौहर अली राहाता छोड़ शिरडी आया और बाबा के साथ मस्जिद में निवास करने लगा। उसने अपनी मधुर वाणी से लोगों के मन को जीत लिया। वह बाबा को भी अपना एक शिष्य बताने लगा। बाबा ने कोई आपत्ति नहीं की और उसका शिष्य होना स्वीकार कर लिया। तब गुरु और शिष्य दोनों पुनः राहाता में आकर रहने लगे। गुरु शिष्य की योग्यता से अनभिज्ञ था, परन्तु शिष्य गुरु के दोषों से पूर्ण परिचित था। इतने पर भी बाबा ने कभी उसका अनादर नहीं किया और पूर्ण लगन से अपना कर्त्तव्य निभाते रहे और उसकी अनेक प्रकार से सेवा की। वे दोनों कभी-कभी शिरडी भी आया करते थे, परन्तु मुख्य निवास राहाता में ही था। श्री बाबा के प्रेमी भक्तों को उनका दूर राहाता में रहना अच्छा नहीं लगता था। इसलिये वे सब मिलकर बाबा को शिरडी वापस लाने के लिये गए। इन लोगों की ईदगाह के समीप बाबा से भेंट हुई और उन्हें अपने आगमन का हेतु बतलाया। बाबा ने उन लोगों को समझाया कि फकीर के आने के पूर्व ही आप लोग शिरडी लौट जाएँ। इस प्रकार वार्त्तालाप हो ही रहा था कि इतने में फकीर आ पहुँचे। इस प्रकार अपने शिष्य को वहाँ से ले जाने का कुप्रयत्न करते देखकर वे बहुत ही क्रोधित हुए। कुछ वादविवाद के पश्चात् स्थिति में परिवर्त्तन हो गया और अंत में यह निर्णय हुआ कि फकीर व शिष्य दोनों ही शिरडी में निवास करें, और इसीलिये वे शिरडी में आकर रहने लगे। कुछ दिनों के बाद देवीदास ने गुरु की परीक्षा की और उसमें कुछ कमी पाई। चाँद पाटील की बारात के साथ जब बाबा शिरडी में आए थे,उससे १२ वर्ष पूर्व देवीदास लगभग १० या ११ वर्ष की अवस्था में शिरडी आए थे और हनुमान मंदिर में रहते थे। देवीदास सुडौल, सुन्दर आकृति तथा तीक्ष्ण

बुद्धि के थे। वे त्याग की साक्षात्मूर्त्ति तथा अगाध ज्ञानी थे। बहुत-से सज्जन जैसे तात्या कोते, काशीनाथ व अन्य लोग, उन्हें अपने गुरु-समान मानते थे। लोग जौहर अली को उनके सम्मुख लाये। विवाद में जौहर अली बुरी तरह पराजित हुआ और शिरडी छोड़ वैजापूर को भाग गया। वह अनेक वर्षों के पश्चात् शिरडी आया और श्री साईबाबा की चरण-वन्दना की। उसका यह भ्रम कि ''वह स्वयं गुरु था और श्री साईबाबा उनके शिष्य'' अब दूर हो चुका था। श्री साईबाबा उसे गुरु-समान ही आदर करते थे, उसका स्मरण कर उसे बहुत पश्चात्ताप हुआ। इस प्रकार श्री साईबाबा ने अपने प्रत्यक्ष आचरण से आदर्श उपस्थित किया कि अहंकार से किस प्रकार छुटकारा पाकर शिष्य के कर्त्तव्यों का पालन कर, किस तरह आत्मानुभव की ओर अग्रसर होना चाहिए। ऊपर वर्णित कथा म्हालसापति के कथनानुसार है। अगले अध्याय में रामनवमी का त्यौहार, मस्जिद की पूर्व हालत एवं पश्चात् उसके जीर्णोद्धार इत्यादि का वर्णन होगा।

॥ श्री सद्गुरु साईनाथार्पणमस्तु। शुभं भवतु॥